कालिदास का सौन्दर्य चिन्तन

डॉ. उषा नागर

व्याख्याता संस्कृत
बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय अलवर

शोध सारांश

सौन्दर्यशास्त्रीय चिन्तन प्राचीन काल से ही दार्शनिकों एवं काव्यमर्मज्ञों का प्रिय विषय रहा है। भारतीय विचारकों का सौन्दर्यचिन्तन पाश्चात्यों से अधिक प्राचीन है। भारतीय चिन्तन में सौन्दर्य के बाह्य और आन्तरिक दोनों रूपों को महत्त्व दिया गया है। संस्कृत कवियों का सौन्दर्यचित्रण अत्यन्त समृद्ध एवं परिष्कृत है। संस्कृत कवि परम्परा में कविकुल गुरु कालिदास का सौन्दर्य सन्निवेश अन्यतम है, यह सात्विकता की प्रेरणा देता है। भारतीय परम्परा में सौन्दर्य के रूप में मानवीय रूप आकार की अपेक्षा सौन्दर्य प्रभाव को प्रकृति सौन्दर्य का ही आदर्श माना गया है। महाकवि कालिदास ने प्रकृति को मुख्यतः श्रृंगार भावना के उद्दीपन एवं पोषण के साधन के रूप में ही अनुभव नहीं किया है अपितु प्रकृति से तादात्म्य स्थापित कर उससे संवाद स्थापित किया है, यहीं से प्रकृति के मानवीकरण का उत्स प्रारम्भ होता है । कवि की चेतना सुन्दर की ही नहीं, उदात्त की भी अनुभूति करती है।

संकेत शब्द – सौन्दर्यशास्त्र, सौन्दर्यचिन्तन, सौन्दर्यचेतना, कलाचेतना, कालिदास, काव्यमर्मज्ञ, प्रकृति सौन्दर्य, सांस्कृतिक सौन्दय, वाक् सौन्दर्य, शारीरिक–सौन्दर्य, मानवीकरण, श्रृंगार।

सौन्दर्यशास्त्रीय चिन्तन की परम्परानुसार सौन्दर्यशास्त्र को दर्शनशास्त्र की एक अभिन्न शाखा के रूप में माना जाता है। मानव की कलाचेतना और उससे सम्बन्धित आनन्दानुभूति का विवेचन सौन्दर्यशास्त्र प्रस्तुत करता है। सौन्दर्यचेतना मानव मन की वह भावात्मक स्थिति है जिसे सौन्दर्यबोध कहते हैं सुन्दरस्य भावः सौन्दर्यम् । इन्द्रियसंवेद्य अथवा अनुभूतिजन्य होकर जब कोई वस्तु अथवा कला भौतिक अथवा मानसिक रूप से आनन्द का अनुभव कराती है तो वह सौन्दर्य की वस्तु या कला मानी जाती है। इस सौन्दर्यबोध के बाह्य एवं आन्तरिक रूप से दो पक्ष माने जाते हैं। बाह्य स्वरूप में वस्तुगत सौन्दर्य इन्द्रियों को एकान्तिक आह्लाद प्रदान करता है और आन्तरिक स्वरूप में चेतना की अनुभूति का विषय होने पर आत्यन्तिक आनन्द प्रदान करता है।

भारतीय चिन्तन परम्परा में आदिकाल से ही सौन्दर्य के विभिन्न तत्त्वों पर सूक्ष्मता से विचार किया गया है। प्रसंगानुसार सौन्दर्य के अपरपर्याय के रूप में विभिन्न शब्दों का प्रयोग हुआ है। ऋग्वेद में इन्द्र, अग्नि, वरुण, रुद्र, उषस् और विष्णु के विराट और तेजस्वी रूपों का वर्णन अनेक ऋचाओं में प्राप्त होता है। ऋग्वेद के उक्त वर्णनों में सौन्दर्य के ऐन्द्रिय स्वरूप के सूत्र मिलते हैं।

कालिदास का सौन्दर्य सात्विकता की प्रेरणा देता है। भारतीय परम्परा में सौन्दर्य के रूप में मानवीय रूप आकार की अपेक्षा सौन्दर्य प्रभाव को प्रकृति सौन्दर्य का ही आदर्श माना गया है।

प्रकृति सौन्दर्य

प्रकृति मुख्यतः उद्दीपन का कार्य करती है। संस्कृत काव्य का मानव प्रकृति से अविच्छिन्न है, वह प्रकृति के आश्रय में रहता हुआ प्राकृतिक उपादानों का उपयोग करता है। रघुवंश में राजाओं के व्यक्तित्व एवं रूप का चित्रण करती हुई सुनन्दा बार–बार इन्दुमती से कहती है कि वह राजा विशेष के साथ प्रकृति की विशिष्ट रमणीय पीठिका में विहार करने को तैयार हो जाये –

अनेन यूना सह पार्थिवेन रम्भोरु कच्चिन्मनसो रुचिस्ते।
सिप्रातरङ्गानिलकम्पितासु विहर्तुमुद्यानपरम्परासु ।।
अध्यास्य चाम्भः पृषतोक्षितानि शैलेयगन्धीनि शिलातलानि।
कलापिनां प्रावृषि पश्य नृत्यं कान्तासु गोवर्धनकन्दरासु।।

हे कदली स्तम्भ जैसे ऊरुवाली! क्या तुम्हारी यह मनोकामना है कि इस राजा के साथ सिप्रा नदी की तरंगों का स्पर्श कर आती हुई हवा से कम्पित उद्यानों की पंक्ति में विहार करो ? और वर्षा ऋतु में गोवर्धन पर्वत की कन्दराओं म जलबिन्दुओं से सिक्त एवं शिलाजीत की गंधयुक्त शिलातलो पर बैठकर मयूर नृत्य देखो। नारी का सम्पर्क प्राप्त कर प्रकृति और उद्दीपक हो जाती है–

कुसुसमेव न केवलमार्तवं नवमशोकतरोः स्मरदीपनम।
किसलयप्रसवोऽपि विलासिना मदयिता दयिताश्रवणार्पितः ।।

ऋतु में उत्पन्न अशोक वृक्ष का केवल फूल ही कामोद्दीपक नहीं हुआ, अपितु विलासियों को उन्मादित करने वाला, प्रियाओं का कर्णभूषण बना हुआ नवपल्लव भी कामोद्दीपक हुआ।

नारी एवं प्रकृति का यह सम–आत्मभाव नारी अङ्गों के उपमानों के विन्यास में भी अभिव्यक्त होता है। महाकवि कालिदास अपनी प्रिय नाट्यकृति अभिज्ञानशाकुन्तलम् में नायक दुष्यन्त के माध्यम से शकुन्तला के सौन्दर्य का वर्णन करते हुए कहता है– शकिसलय के समान रङ्गवाला अधर है, कोमल शाखाओं का अनुकरण करनेवाली बाहें है और अंग–अंग में फूलों जैसा लुभानेवाला यौवन सन्नद्ध (गुथा) है–

अधरः किसलयरागः कोमलविटपानुकारिणौ बाहू,
कुसुममिव लोभनीयं यौवनमगेषु सन्नद्धम् ।।

काव्यरचना में मुख की कमल से और केशों की भौरा स कवियों को विशेष प्रिय रही है, इस प्रकार के वर्णनों में पुनरावृतियों के उपरान्त भी वह नतन अभिव्यंजना को प्रस्तुत करती है।
महाकवि कालिदास ने मेघदूतम् में भौरों के उपमान का अनन्य प्रयोग किया है; मेघ को देखकर कौतूहल से भरे दशपुर की वधुओं के कटाक्ष, हिलते हुए श्वेत कुन्द कुसुमों का पीछा कर रहे भौरों की शोभा को चुराते हुए प्रतीत होते हैं–

कुन्दक्षेपानुगमधुकरश्रीमुषाम् आत्मबिम्बम्
पात्रीकुर्वन् दशपुरवधूनेत्रकौतूहलानाम्।।

सौन्दर्य के चितेरे कालिदास की दृष्टि प्रकृति की मनोहर छवियों में प्रायः नारीसौन्दर्य का आरोपण करती है–

अभिनयान्परिचेतुमिवोद्यता मलयमारुतकम्पितपल्लवा।
अमदयत्सहकारलता मनः सकलिका कलिकामजितामपि।।
श्रुतिसुखभ्रमरस्वनगीतयः कुसुमकोमलदन्तरुचो बभुः।
उपवनान्तलता पवनाहतैः किसलयैः सलयैरिव पाणिभिः।।
शुशुभिरे स्मितचारुतराननाः स्त्रिय इव श्लथशिञ्जितमेखलाः।
विकचतामरसा गृहदीर्घिका मदकलोदकलोलविहङ्माः ।।

लयाचल की वायु से कम्पित नव कोरक युक्त आम्रलता, ऐसी जान पड़ती थी जैसे नर्तकी की भाँति अभिनय का अभ्यास कर रही हो, यह काम–क्रोध को जीतनेवालों (ऋषिमुनियों) का मन भी हर लेती थी। कानों को सुखकर भ्रमरों का गुंज्जन ही जिनके गीत थे, कोमल कुसुम ही जिनकी दन्तकान्ति थी, वे उपवन की लताएँ लयपूर्वक गतिमान् हाथों के समान पवन के आघात से हिलते हुए कोमल पत्तों से शोभित हुई। गृहों के मध्य निर्मित वापियाँ, जिनमें कमल खिल रहे थे और जलपक्षी मद से । कल ध्वनि कर रहे थे, ऐसी शोभित हुई जैसे मुस्कान से अधिक ने सुन्दर मुखों वाली स्त्रियाँ, जिनके नितम्बों पर ढीली करधनियाँ ो बज रही हैं।

कालिदास हिमालय पर्वत के वर्णन प्रसंग में आकार के सम्बन्धी विराट की भावना को बड़ी कुशलता से अभिव्यक्त करते वे हैं। हिमालय की उत्तुंगता का बिम्ब उपस्थित करने के लिये कवि क ने एक अनुपम सौन्दर्य विधान किया है –

सप्तर्षिहस्तावचितावशेषाण्यधो विवस्वान्परिवर्तमानः।
पद्मानि यस्याग्रसरोरुहाणि प्रबोधयत्यूर्ध्वमुखैर्मयूखैः ।।

सप्तर्षियों के हाथों चयन से अवशिष्ट, हिमालय पर्वत के शिखरों पर अवस्थित सरोवरों में उगने वाले कमलों को, नीचे परिक्रमण करता हुआ सूर्य ऊपर की ओर जाने वाली किरणों से विकसित करता है। यहाँ हिमालय की चोटियाँ विशिष्ट अवसरों से पर सूर्यमंडल से भी ऊँचे होने का बिम्ब उपस्थित करती हैं।

सांस्कृतिक सौन्दर्य

संस्कृत काव्यों के नायक राजाओं के सम्मुख प्रायः पुत्रहीनता की समस्या उत्पन्न हो जाती है। इस सम्बन्ध में दिलीप, रघु, दशरथ विशिष्ट उदाहरण के रूप में दिखाई देते हैं। कालिदास ने रघुवंशम् में राजा दिलीप की पत्नी सुदक्षिणा के गर्भवती हो जाने पर शारीरिक परिवर्तनों का सौन्दर्यात्मक चित्रण किया है। गर्भधारण की अवस्था में शारीरिक स्थूलता के कारण सुदक्षिणा ने आभूषण धारण करना कम कर दिया और उसका मुख भी पीतवर्ण का हो गया। उस अवस्था में वह ऐसे ही शोभित हुई जैसे प्रातःकाल में थोड़े से तारकों वाली रात्रि मलिन कान्ति वाले चन्द्रमा से शोभित होती है। जिस प्रकार मिट्टी की सौन्धी गन्ध को मनुष्य पुनः पुनः प्राप्त करने की अभिलाषा रखता है उसी प्रकार मिट्टी की गन्ध वाले उसके शरीर को एकान्त में सूंघते हुए दिलीप को तृप्ति नहीं होती थी –

दिनेषु गच्छत्सु नितान्तपीवरं तदीयमानीलमुखं स्तनद्वयम्।
तिरश्चकार भ्रमराभिलीनयोः सुजातयोः पङ्कजकोशयोः श्रियम् ।।

कुछ दिन व्यतीत होने पर अत्यन्त स्थूल एवं नीलवर्ण मुख वाले सुदक्षिणा रानी के स्तनों ने भ्रमरयुक्त कमल की दो कलियों की शोभा को अपनी शोभा से फीका कर दिया है।

कवि ने शिशु राम को उत्पन्न करके दुर्बल यष्टि वाली कौशल्या का वर्णन किया है। शय्या पर पास स्थित राम से कृष उदरवाली कौशल्या वैसे ही सुशोभित हुई जैसे शरद ऋतु में थोड़े पाटवाली गंगा तट प्रान्त में विकसित कमलों से शोभायमान होती है

शय्यागतेन रामेण माता शातोदरी बभौ।
सैकताम्भोजबलिना जाह्नवीव शरकृत्शा।।

लज्जा नारी का नैसर्गिक आभूषण है, प्राचीन भारतीय नारी में यह विशेषता सहज रूप में प्रस्फुटित रही है। सांस्कृतिक मूल्यों को महत्त्व प्रदान करते हुए रघुवंशम् में विवाह के अवसर पर वर की एक झलक पाने के लिए इन्दुमती को विशेष यत्न करना होता है, वहीं वर्तमान भौतिक युगीन नारी के लिये यह अति सुलभ है।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् के चतुर्थ अंक में शकुन्तला के विदाई के अवसर पर महर्षि कण्व द्वारा दिया गया उपदेश सांस्कृतिक मूल्यों की पराकाष्ठा है। पुत्री के विवाह के बाद विदाई पर उसके माता–पिता के हृदय मे जो वात्सल्य उमड़ता है, उसका कवि ने बडा ही मार्मिक एवं स्वाभाविक चित्रण किया है। कण्व का कथन है कि आज शकुन्तला पतिगृह को चली जायेगी, अतः हृदय दुःख से भर गया है, कण्ठ अश्रुप्रवाह रोकने के कारण गद्गद् हो गया है, दृष्टि निश्चेष्ट हो गई है। मुझ वनवासी को शकुन्तला के प्रति स्नेह के कारण यदि ऐसी यह विकलता है तो गृहस्थ लोग अपनी पुत्री के वियोग के दुःखो से कितने ही दुःखित होते होंगे –

यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमत्कण्ठया.
कण्ठः स्तम्भितवाष्पवृत्तिकलुषश्चिन्ताजडंदर्शनम् ।
वैक्लव्यं मम तावदीदृशमिदं स्नेहादरण्यौकसः,
पीड्यन्ते गृहिणः कथं नु तनयाविश्लेषदुःखैर्नवैः ।।

विदाई के अवसर पर पिता का अपनी पुत्री को उपदेश भी द्रष्टव्य है। इस उपदेश में भी भारतीय संस्कृति के महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त का सौन्दर्य सन्निहित है –

शुश्रूषस्व गुरुन् कुरु प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने,
भर्तुर्विप्रकृतापि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गमः।
भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भाग्येष्वनुत्सेकिनी,
यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः ।।

अर्थात् तुम सास–ससुर आदि की सेवा करना, सपत्नियों के साथ प्रिय सखियों जैसा व्यवहार करना, पति के द्वारा अपमानित होने पर भी रोष से उनके विरुद्ध आचरण मत करना, सेवकों के प्रति अत्यन्त उदार रहना और अपने भाग्य पर गर्व मत करना । इस प्रकार का आचरण करने वाली स्त्रियाँ ही गृहिणी नाम को सार्थक करती हैं।

प्रकृति के प्रति मानवीय कर्तव्यों की सूक्ष्म अनुभूति के चित्रों के सुन्दर उपस्थापन में कालिदास अद्वितीय स्थान रखते हैं –

पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या,
नादत्ते प्रियमण्डनापि भवतां स्नेहेन या पल्लवम् ।
आद्ये वः कुसुमुप्रसूतिसमये यस्या भवत्युत्सवः,
सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वेरनुज्ञायताम् ।।

शारीरिक–सौन्दर्य

महाकवि कालिदास ने अपनी नायिकाओं के सौन्दर्यवर्णन में रत्न, आभरण, मणि, मुक्ता, माला और सुवर्णादि का अत्यन्त सुन्दर चित्र अंकित किया है। शकुन्तला प्रियमण्डना है। परन्तु उल्लेखनीय बात यह है कि उनकी प्रमुख नायिकाएँ पार्वती, सुदक्षिणा, सीता और शकुन्तला तपोवन में ही चारुता को प्राप्त हुई हैं।

अनिंद्यसुन्दरी शकुन्तला की रूपसम्पदा का मूल्यांकन भी केवल प्रकृति के कमनीय पदार्थों के साथ किया जा सकता है। उसके अधर कोपलों के समान लालिमा से अनुरंज्जित, दोनों भुजाएँ वृक्ष की कोमल शाखाओं के समान हैं और उसके अंगों में व्याप्त यौवन लुभावने पुष्प की भाँति भासित होता है –

अधरः किसलयरागः कोमलविटपानुकारिणौ बाहू,
कुसुममिव लोभनीयं यौवनमङ्गेषु सन्नद्धम् ।।

अनिंद्य सुन्दरी निसर्गमधुरा शकुन्तला वल्कलवेष्टिता होने पर भी मनोज्ञा है –

सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यं मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्म लक्ष्मी तनोति ।
इयमिधकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम् ।।

कमल यद्यपि शैवाल में लिपटा है, फिर भी सवय चन्द्रमा का कलंक, यद्यपि काला है, किन्तु उसकी सन्दरता बनाता है। ये जो सुकुमार कन्या है, इसने यद्यपि वल्कल वस्त्र धारण किए हुए हैं तथापि वह और सुन्दर दिखाई दे रही है। क्योंकि सुन्दर रूपों को क्या सुशोभित नहीं कर सकता?

बाह्य आभरणों की उपादेयता अपने स्थान पर स्वीकार करते हुए भी कवि ने उनको सौन्दर्याभिव्यक्ति में आवश्यक नहीं माना है। उनकी नायिकाएँ तो स्वयं संसर्ग में आए हुए आभूषणों को और भी सुन्दर बना देती है। उर्वशी का सुतरां लावण्ययुक्त शरीर भी श्रृंगार विधायक सामग्रियों का श्रृंगार है –

अस्याः सर्गविधौ प्रजापतिरभूच्चन्द्रो नु कान्तिप्रदः।
शृङ्गारैकरसः स्वयं नु मदनो मासो नु पुष्पाकरः।।
वेदाभ्यासजडरू कथं नु विषयव्यावृत्तकौतूहलो ।
निर्मातुं प्रभवेन्मनोहरमिदं रूपं पुराणो मुनिः।।

महाकवि ने सभी नायिकाओं को तपस्या और विरह की अग्नि में तपाकर स्वर्ण की भाँति निखारा है, उनमें नैतिक एवं चारित्रिक सौन्दर्य के उत्कर्ष की प्रतिष्ठा करके उनको सतत कमनीय और महनीय बना दिया है।

कवि का मत है कि यदि शकुन्तला के मनोहर रूप और विधाता की विभूता, रूपनिष्पादन सामर्थ्य पर एक साथ विचार है कया जाए तो यह जान पड़ता है कि विधाता ने सबसे पहले शकुन्तला के रूप की मानस

कल्पना की होगी, उसका चित्त उस समय पूर्ण सत्वस्थ रहा होगा और फिर उसने रूपराशि से शकुन्तला का सुन्दर चित्र बनाकर फिर उसमें प्राणों का संचार किया होगा–

चित्रे निवेश्य परिकल्पितसत्त्वयोगा ,
रूपोच्चयेन मनसा विधिना कृता नु ।
स्त्री–रत्न–सृष्टिरपरा प्रतिभाति सा मे
धातुर्विभुत्वमनुचिन्त्य वपुश्च तस्याः ।।

महाकवि कालिदास द्वारा चित्रित सुन्दर नायिकाएँ विधाता की सत्वस्थचित्तकल्पना का परिपाक हैं। वे विधाता की मानसी सृष्टि हैं।

नखशिख वर्णन की परम्परा शृंगारकाव्य में प्रारम्भ से ही रही है, कालिदास ने भी इस प्रकार के वर्णन प्रसंगों में अपनी नायिकाओं के सौन्दर्य का चित्रण किया है। कुमारसंभवम् में कवि ने पार्वती के शारीरिक रूप का विशद् वर्णन प्रस्तुत किया है। कवि की दृष्टि नायिका के प्रत्येक अवयव का प्रत्यक्षीकरण करने का प्रयत्न करती है।

उन्मीलितं तूलिकयेव चित्रं सूर्यांशुभिभिन्नमिवारविन्दम् ।
बभूव तस्याश्चतुरस्रशोभि वपुर्विभक्तं नवयौवनेन।।
एतावता नन्वनुमेयशोभि काञ्चीगुणस्थानमनिन्दितायाः।
आरोपितं यद् गिरिशेन पश्चादनन्यनारीकमनीयमकम् ।।
शिरीषपुष्पाधिकसौकुमार्यौ बाहू तदीयाविति मे वितर्कः।
पराजितेनापि कृतौ हरस्य यौ कण्ठपाशौ मकरध्वजनः ।।
प्रवातनीलोत्पलनिर्विशेषमधीरविप्रेक्षितमायताक्ष्याः।
तया गृहीतं नु मृगाङ्गनाभ्यस्ततो गृहीतं नु मृगाङ्गनाभिः ।।

जिस प्रकार तूलिका के रंगों से चित्र उद्भासित हो उठता है, जैसे सूर्य की किरणों से कमल खिल जाता है, वैसे ही नये यौवन से उसका सुगठित, अनुपातयुक्त शरीर पूर्ण सौन्दर्य में प्रस्फुट हो गया। उसके कटि प्रदेश की शोभा का अनुमान इसी से किया जा सकता है कि बाद में स्वयं शिव ने उसे अपने अंक में स्थान दिया– ऐसे अंक में जो किसी दूसरी नारी के लिए प्राप्य नहीं था। पार्वती की बाँहें शिरीष के फूलों से भी अधिक सुकुमार थीं, तभी तो पराजित होने पर भी, कामदेव ने उन्हें शिव के कंठ का बंधन बना दिया।

यौवन के आगमन से पुष्ट एवं आकर्षक बनते हुए नारी के अंगों की सौन्दर्याभिव्यक्ति में कालिदास सिद्धहस्त हैं।

पुरुष शरीर में भी कालिदास ने इसी प्रकार अपनी अभिरुचि प्रदर्शित की है । यौवन की ओर उन्मुख रघु के शरीरवृद्धि का एक चित्रण द्रष्टव्य है।

महोक्षतां वत्सतरः स्पृशनिव द्विपेन्द्रभाव कलभः श्रयन्निव।
रघुः क्रमाद्यौवनभिन्नशैशवः पुपोष गाम्भीर्यमनोहरं वपुः।।

वृषभभाव को स्पर्श करते हुए बछड़े के समान, गजभाव को प्राप्त होते हुए कलभ (हाथी के बच्चे) की भाँति रघु ने क्रमशः शैशव को छोड़कर गंभीर तथा सुन्दर पुष्ट शरीर प्राप्त किया।

अज–इन्दुमती के विवाह के प्रसंग में कालिदास ने र कुलवन्ती स्त्रियों की चेष्टाओं का चित्र खींचा है। ऐसी स्त्रियाँ भी ह सुन्दर पुरुष के प्रति आकृष्ट होकर कुछ क्षणों के लिए कठोर। आत्म–नियंत्रण भूल जाती हैं, और आकर्षण भावना को प्रकट। करनेवाली सूक्ष्म चेष्टाएँ करने लगती हैं।

राजा भोज के द्वारा निर्दिष्ट ऊँचे मंच पर कुमार अज सीढ़ियों से चढ़कर वैसे ही पहुँच गये जैसे शिलाओं से रचित सोपानों पर चढ़ता हुआ सिंहशावक पर्वत के शिखर पर पहुँच जाता है। उस रत्नजटित आसन पर सुन्दर रंगों का बिछावन था, उस पर बैठकर कुमार वैसे ही शोभित हुए जैसे कि मयूर की पीठ का आश्रय लेने वाले स्कन्द है। दूसरे राजा भी इसी प्रकार मनोज्ञ वेष में थे –

तासु श्रिया राजपरम्परासु प्रभाविशेषोदयदुर्निरीक्ष्यः।
सहस्रधात्मा व्यरुचद्विभक्तः पयोमुचां पंक्तिषु विद्युतेव।।

उन राजाओं की पंक्तियों में श्री का देदीप्यमान रूप–सौन्दर्य मानो सैकड़ों टुकड़ों में बँटकर चमक रहा था, जैसे बादलों की पंक्तियों में अपने को बाँटकर बिजली चमकती है।

कालिदास के सौन्दर्य की पराकाष्ठा यह है कि वे जीवन के कठोरतम पक्षों में भी सौन्दर्य की उद्भावना करते हैं। कवि युद्ध के भीषण दृश्य में भी श्रृंगारिक सौन्दर्य का पुट देने में कुशल है। राम के द्वारा किये गये ताड़का के वध को कवि ने एक श्रृंगारी रूपक में बाँधने का प्रयास किया है –

राममन्मथशरेण ताडिता दुःसहेन हृदये निशाचरी।
गन्धवद्रुधिरचन्दनोक्षिता जीवितेशवसतिं जगाम सा ।।

'राम–रूपी कामदेव के कठिन बाण से हृदय में ताड़ित होकर राक्षसी ताड़का, गन्धभरे रुधिररूप चन्दन से चर्चित जीवितेश (प्रियतम अथवा यम) के स्थान को चली गयी। यहाँ ध्वनित होता है कि वह काम विवश रमणी की भांति जीवितेश से मिलने गयी।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि काव्य में सौन्दर्य के सर्वाङग निरूपण के अनुशीलन की दृष्टि से महाकवि अन्यतम हैं। कालिदास ऐन्द्रिय भावानुभूति तथा रसात्म के महान कवि हैं । उन्होंने प्रत्येक काव्यात्मक तत्त्वों और महनीय काव्यरूपों को इन्द्रियसुलभ सौन्दर्य–सरणि में सन्निहित कर कलात्मकपूर्णता को समरसता के साथ अभिव्यंजित किया है। कालिदास प्रकृतिगत सौन्दर्य एवं मानवीय भावानुभूति के तत्त्वों को कल्पना के माध्यम से समरस बना देने में प्रवीण हैं । कालिदास सौन्दर्य का सर्वाङ्ग निरूपण किया है अतः उन्हें सौन्दर्यवादी कवि कहा जाना कोई अत्युक्ति नहीं है।

सन्दर्भ :

1. रघुवंशम् 6.35, 51
2. रघुवंशम्, 9.28
3. अभिज्ञानशाकुन्तलम्– 1.18
4. मेघदूतम्, 1.50
5. रघुवंशम्, 9.33, 35, 37
6. कुमारसंभवम्, 1.16
7. रघुवंशम्, 3.8
8. रघुवंशम् 10.69
9. अभिज्ञानशाकुन्तलम्–4.6

10. अभिज्ञानशाकुन्तलम्– 4.18
11. अभिज्ञानशाकुन्तलम्– 4.9
12. रघुवंशम्– 1.1
13. कुमारसम्भवम्– 1.28
14. रघुवंशम, 10.36, 37
15. अभिज्ञानशाकुन्तलम्– 1.17
16. अभिज्ञानशाकुन्तलम्– 1.18
17. विक्रमोर्वशीयम् 1. 10
18. अभिज्ञानशाकुन्तलम् –2.9
19. कुमारसंभवम्, 1.32, 37, 41, 46
20. रघुवंशम् 3.32
21. रघुवंशम्, 6.5 22.
22. रघुवंशम्, 11, 20